शोध मंथन Vol. XI No.II Apr.-June. 2020 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Impact Factor 7.760 (SJIF)

वर्तमान भारत में गाँधी के समाजवाद की प्रासंगिकता

डॉ0 मालती
एसोसिएट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
एन0 ए0 एस0 कॉलेज, मेरठ
Email:maltiphogatnas@gmail.com

सारांश

– *गांधी जी का यह विश्वास था कि हम सब समान पैदा होते हैं इसलिए हम सबको समान अवसर पाने का अधिकार है। अर्थात उत्पादन की प्रक्रिया में सबकी समान सहभागिता होना समाजवाद का आधार है। शासकीय शक्ति पर पूंजीपति तथा श्रमिक दोनों की बराबर भागीदारी सुनिश्चित किया जाना आवश्यक है। वर्तमान समय में धनी और गरीब के बीच कितनी ही असमानताएं तथा उससे पैदा होने वाली समस्याएं हैं। आर्थिक क्षेत्र में पाई, जाने वाली इन असमानता को दूर करने के दो संभावित उपाय हैं–एक तो साम्यवादी जिसमें धनिकों से धन छीन कर सर्व हित में प्रयोग किया जाए और दूसरा यह है कि धनी लोग स्वेच्छा से कर्तव्य समझकर अपना धन सर्वसाधारण के हित में लगाएं और स्वयं को निर्धनों का संरक्षक समझे। गांधीजी समाजवाद की हिमायत करते हुए उसे प्राप्त करने का एकमात्र रास्ता जो अहिंसा से होकर जाता है, को अपनाने पर बल देते हैं। अहिंसात्मक उपाय के द्वारा ना तो पूंजीपति नष्ट होगा और न पूंजीवाद, इसके द्वारा उन्होंने पूंजीपति को निमंत्रण दिया कि वह अपने को उन लोगों का संरक्षक माने जिनके परिश्रम पर वह अपनी पूंजी को बनाने, कायम रखने तथा उसे आगे बढ़ाने के लिए आश्रित है। उनके समाजवाद का अर्थ है सर्वोदय वह अंतिम जन्म तक के व्यक्तित्व के पूर्ण विकास की आजादी चाहते हैं जो समाज के सर्वागींण विकास की आधारशिला है। जहॉ समाजवाद अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए राज्य की सहायता लेता है तो गांधीवाद अपनी सफलता के लिए प्रत्येक नागरिक के अंतःकरण की उन्नति और संस्कृति के विकास पर विश्वास रखता है।*

प्रस्तावना

सभी आधुनिक समाजों में साम्यवादी, पूंजीवादी, विकासशील इत्यादि छोटे से राज्यों में अनेक विषमताओं को खत्म करने का दावा तो किया गया परंतु इन विषमताओं को खत्म करने की प्रक्रिया में अन्य विषमताओं को जन्म दे दिया गया। मौजूदा साम्यवादी देशों ने किसी हद तक आर्थिक विषमताओं को कम किया है परंतु इनमें राजनैतिक और रुतबे की विशेषताएं अभूतपूर्व भयावह स्थिति में पहुंच गई है। इसी खतरे को समझते हुए गांधी ने विशिष्ट लोगों और जनसाधारण के भेद को समाप्त करने की कोशिश की। वैसे इस भेद को ही समाप्त करने की

बात मार्क्स ने भी कही थी लेकिन उसने इन्हें अपनी रणनीति का अंग नहीं बनाया। इसे साम्यवादी समाज का आदर्श मानकर भविष्य के लिए छोड़ दिया गया।

मार्क्स का मानना था कि आधुनिकतम युग समाजवादी होगा। यह सर्वरूप में वर्ग विहीन, राज्य विहीन और शोषण रहित होगा। और यह तभी संभव होगा जबकि पूंजीवादी व्यवस्था को खूनी क्रांति के द्वारा श्रमिक वर्ग उखाड़ फेकेगा और शासकीय शक्ति पर अपना अधिकार जमायेगा। परंतु इस प्रकार से समाजवाद की स्थापना कर पाना संभव नहीं होगा बल की आवश्यकता होगी कि राज्य द्वारा भूमि के व्यक्तिगत स्वामित्व का अंत, यातायात के साधनों का राष्ट्रीयकरण, कानून द्वारा मुद्रा का नियंत्रण, व्यापार तथा वाणिज्य का नियमन, संपत्ति के उत्तराधिकार का उन्मूलन इत्यादि करना होगा तभी, समाजवाद की स्थापना हो सकेगी। मार्क्स की इस अवधारणा के विपरीत गांधी ने समाजवाद की व्याख्या अनोखे तरीके से की है। गांधी जी के मतानुसार ''सच्चा समाजवाद तो हमें अपने पूर्वजों से प्राप्त हुआ है जो बता गए हैं कि सब भूमि गोपाल की है, इसमें कहीं मेरी और तेरी की सीमाएं नहीं यह सीमा आदमी की बनाई हुई है इन्हे तोड़ भी सकते हैं। गोपाल यानी कृष्ण भगवान; आधुनिक भाषा में गोपाल यानी राज्य यानी जनता। यही समाजवाद की व्यापकता का आधार बिंदु है।''

गांधीजी लिखते हैं–''समाजवाद एक सुंदर शब्द है और जहां तक मुझे मालूम है, समाजवाद में सब सदस्य बराबर होते हैं ना कोई ऊंचा होता है न कोई नीचा होता है। इसमें राजा और प्रजा, अमीर और गरीब, मालिक–मजदूर सब एक स्तर पर होते हैं। धर्म की भाषा में कहें तो समाजवाद में द्वैत या भेदभाव नहीं होता, सर्वत्र एकता, अद्वैत का प्रभुत्व होता है। आज संसार भर के समाज को देखे तो द्वैत या अनेकता के अतिरिक्त कुछ भी दिखाई नहीं देता, एकता या अद्वैत का नाम निशान नहीं दिखाई देता। यह आदमी ऊंचा है, यह हिंदू है या ईसाई है, परंतु मेरी कल्पना की एकता या अद्वैतवाद में सब एक हो जाते हैं यानी एकता में समा जाते हैं। यह समाजवाद स्फटिक की तरह शुद्ध है इसलिए इसे प्राप्त करने के साधन भी शुद्ध होना चाहिए क्योंकि अशुद्ध साधनों से प्राप्त होने वाला साध्य भी अशुद्ध होता है। इसलिए राजा का सिर काटने से राजा और प्रजा बराबर नहीं हो जाएंगे हम सत्यम आचरण द्वारा ही सत्य यानी समाजवाद को प्राप्त कर सकते हैं। गांधीजी आगे लिखते हैं कि समाजवादी समाज में–''मैं ऐसी स्थिति लाना चाहता हूं, जिसमें सब का दर्जा समान माना जाए, मजदूरी करने वालों को समाज के निम्न पायदान पर खड़े अंतिम जन की दृष्टि से देखा जाए।''

क्या मार्क्स और गांधी में कोई समन्वय संभव है मार्क्स सर्वहारा क्रांति का मसीहा, उत्पादन के साधनों पर अधिकार के लिए राज्य सत्ता हथियाने के संघर्ष का आवाहन करता है जबकि गांधी 20 वीं सदी का सर्वाधिक समर्थ और अनूठा संत योद्धा। अपने समय की सारी चुनौतियों से जूझते हुए गांधी ने व्यक्ति और समाज के परिवर्तन के लिए एक अलग दृष्टि प्रदान की गांधी संघर्ष के समर्थक नहीं रहे पर उनके लिए संघर्श में एक साधन ह्रदय परिवर्तन रहा है। लेकिन सामाजिक परिवर्तन की बात करने वालों के लिए दोनों का आकर्षण अत्यधिक प्रबल है क्योंकि दोनों ही समाज के आंतरिक परिवर्तन और एक नए समाज के समर्थक हैं। मार्क्स और

गांधी ने साम्राज्यवाद का और पूंजीवाद का पुरजोर विरोध किया है, मार्क्स ने शोषण का विरोध किया वैसे ही गांधी ने शोषण के विरुद्ध विद्रोह किया है। मार्क्स ने सर्वहारा को संगठित होने का आवाहन किया तो गांधी ने भारतीय समाज के सबसे शोषित दलित वर्ग, हरिजनों में नई चेतना फूँकी उनको संघर्ष के लिए तैयार किया। मार्क्स और गांधी में अनेक तरह की समानताएं देखी जा सकती है। परंतु इन समानताओं में दोनों की दृष्टि के अंतर को कम नहीं किया जा सकता क्योंकि गांधी मार्क्स की तरह शोषण मुक्त समाज की बात तो करते हैं परंतु इसके लिए वे सत्ता के केंद्रीकरण को मानने को तैयार नही है। गांधी की विचार धारा शोषण और बुराइ, की शक्तियों के विरुद्ध बिना किसी घृणा के संघर्ष को कहती है और वह मनुष्य की आंतरिक बुराइयों की बात पहले कहते हैं।

मार्क्स पूंजीवादी शोषण का विरोधी हैं परंतु वास्तव में आधुनिक मशीनों वाली सभ्यता की उस बुनियाद को चुनौती नहीं देता, जिस पर पूंजीवाद का समूचा ढांचा खड़ा है। मार्क्स के साम्यवाद का मार्ग इस दुनिया को बदलने में नहीं है, कोई नई बुनियाद रखने में भी नहीं है बल्कि इसी बुनियाद के स्वाभाविक विकास और विस्तार में है। पूंजीवाद की खामी यह है कि यह आधुनिक मशीन तंत्र, यानी उत्पादन के साधनों के विकास में बाधक हो जाता है। समाजवाद और साम्यवाद की नई व्यवस्था इस बाधा को समाप्त कर देगी। इसके बाद शोषण चक्र रुक जाएगा समाज वर्ग विहीन बन जाएगा और इतिहास का द्वंद्व समाप्त हो जाएगा।

इससे सर्वथा अलग गांधी की समूची दृष्टि अलग है उनके लिए इतिहास की मार्क्सवादी व्याख्या का कोई उपयोग नहीं है। इतना ही नहीं उन्होंने आधुनिक मशीनी सभ्यता के रूप में उस आधार को ही चुनौती दी है जिस पर पूंजीवाद और मार्क्सवाद दोनों का तामझाम खड़ा है गांधी की दृष्टि में पूंजीवाद और मार्क्सवाद दोनों में यह बुनियादी समानता है, कि दोनों ही आधुनिक मशीनी सभ्यता और उसके साथ जुड़े भौतिकवाद और हिंसा के पुजारी हैं। दोनों ही स्वभाव से स्वार्थी हैं। दोनों ही आवश्यकताओं की बढ़ोती में विश्वास करते हैं। गांधी तो आवश्यकताओं और यंत्रों दोनों की वृद्धि के खिलाफ थे वे मनुष्य की लिप्सा को सीमित करना चाहते थे इसलिए उन्होंने बार–बार कहा कि समस्या शासन व्यवस्था में सुधार की नहीं है। बल्कि समस्या आधुनिक मशीनी सभ्यता के समानांतर नई व्यवस्था बनाने की है। जब चुनौती स्वयं आत्मवृत्त बने बिना उस सभ्यता को नष्ट करने की है जो शंका और भय की बुनियाद पर टिकी हुइ, है। उनका यह विश्वास है कि मनुष्य के स्वभाव के मूल में स्वार्थ भावना है परंतु वह उन विकारों से ऊपर उठ सकता है इसलिए परिवर्तन का द्योतक बन सकता है। गांधी के लिए अन्याय के संघर्ष का माध्यम व्यक्ति की चेतना और उससे प्रेरित सत्याग्रह है। सत्याग्रह संगठित और सामूहिक तो हो सकता है लेकिन यह साधन की पवित्रता के दायरे में ही है। वस्तुतः गांधी की दृष्टि में सत्याग्रह वह औजार है जो परिवर्तन को ला सकता है।

समाजवादी व्यवस्था को स्थापित करने के लिए सर्वप्रथम आर्थिक समानता लाने का प्रयास करना होगा। पूंजी और मजदूरों के बीच झगड़े को हमेशा के लिए मिटा देना होगा। जब तक मुट्ठी भर धनवान और करोड़ों भूखे रहने वालों के बीच भारी अंतर बना रहेगा तब तक, अहिंसा

की बुनियाद पर चलने वाली राज्य व्यवस्था कायम नहीं हो सकती। स्वतंत्र भारत में बड़े धनवान के हाथों में शासन का जितना भाग होगा, उतना ही गरीब के हाथ में भी होगा, और तब महलों और उसके करीब बसी हुई झुग्गियों का दर्दनाक भेद नजर नहीं आयेगा। गांधी जी ने लिखा है कि–''किसी उच्च वर्ग और आम जनता, राजा और रंग के बीच भारी भेद को यह कहकर उचित नहीं मान लेना चाहिए कि पहली वर्ग की आवश्यकताएं दूसरे वर्ग से अधिक है। यह दलील बेकार है, सबको समान अन्न, मकान, शिक्षा, चिकित्सा व अन्य सुविधाएं समानता के आधार पर मिलनी चाहिए।''

पूंजीवादी समाज और तीसरी दुनिया मार्क्सवाद की सीमा है। इस तथ्य को सबसे अधिक स्पष्टता के साथ गांधी ने पहचाना था। एक और तो भारत जैसे कृषि प्रधान देश की अर्थव्यवस्था की नवीनीकरण की समस्याओं से जूझते हुए और दूसरी ओर मनुष्य तथा मशीन के रिश्तों को समझने की कोशिश करते हुए गांधी ने विकेंद्रित अर्थव्यवस्था की बात कही थी। ऐसी व्यवस्था जो गांव को संपूर्ण इकाई माने और मनुष्य को मशीनों का दास ना बनाए। मशीनें मनुष्य की सहायक तो बने लेकिन स्वामी नहीं। गांधी ने स्वयं कहा है कि यंत्रों से काम लेना उसी अवस्था में अच्छा होता है जबकि किसी निर्धारित काम को पूरा करने के लिए आदमी बहुत कम हो या नपे तुले हो। बेकारी घटाने के संबंध में गांधी का उत्तर कुटीर और लघु उद्योग है इसका अर्थ यह नहीं है कि गांधी बड़े उद्योगों के पूरी तरह खिलाफ थे परंतु वे जानते थे पूरी तरह से ऐसा हो जाने पर समाज में असमानता की खाईगहरी हो जाएगी तथा शोषण प्रारंभ हो जाएगा। उनका मानना था, औद्योगिकरण की प्रक्रिया में श्रमिकों की पूर्ण साझेदारी ही इसे सफल बनाने में सक्षम है।

गाँधी के अनुसार आर्थिक असमानता की जड़ में धनिक या ट्रस्टीपन निहित है इस आदर्श के अनुसार एक व्यक्ति को दूसरे से एक कौड़ी भी ज्यादा रखने का अधिकार नहीं है। तब क्या उससे यह छीन ली जाये? ऐसा करने के लिए हिंसा का आश्रय लेना होगा और हिंसा के द्वारा यदि ऐसा करना संभव हो, तो भी समाज को उससे कुछ लाभ नहीं होगा क्योंकि धन इकट्ठा करने की शक्ति रखने वाली एक आदमी की शक्ति को समाज खो बैठेगा। इसलिए अहिंसक मार्ग यह है कि जितनी उचित मानी जा सके उतनी अपनी आवश्यकताएं पूरी करने के बाद जो धन बाकी बचे उसका वह प्रजा की ओर से ट्रस्टी बन जाए।

आज सामने यह प्रश्न है कि विकेंद्रित अर्थव्यवस्था और ट्रस्टीशिप का विचार गांधी के अपने ही देश में क्यों ना जोर पकड़ पाया इसका तो उत्तर स्पष्ट है कि देश के शासक वर्गों के लिए स्वतंत्रता के पश्चात गांधी का उपयोग ही खत्म हो गया। वह पश्चिमी देशों के मॉडल से औद्योगिकरण में जुट गए। उन्हें यह उम्मीद थी कि औद्योगिकरण के पश्चात वह देशवासियों को उन्नत जीवन स्तर प्रदान करके गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन करने वालों को बेहतर जीवन दे सकेंगे और समाज की असमानता को कम कर सकेंगे लेकिन देश की समस्याओं को सुनने और समाधान देने में यह व्यवस्था नाकाम रही है जिसका उत्तर गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले लोगों के अनुपात से ही स्पष्ट हो जाता है। इसीलिए नए सिरे से कुटीर उद्योग और लघु उद्योगों

को शुरू करने और प्रोत्साहित करने की बातें शुरू हुई है। जिसके माध्यम से गांधी की सार्थकता को समझने की कोशिश हो रही है। दोबारा से इस पर जोर दिया जा रहा है कि ग्राम उन्नत बने और उन्हें वह पूर्व के समान स्थापित कुटीर उद्योगों को फिर से एक नए स्वरूप में स्थापित किया जा सके। जिससे ग्राम का विकास तेजी से संभव हो सके।

गांधी की दृष्टि में समाजवाद की शुरुआत स्वयं समाजवादी से होती है। अथवा जो समाजवादी जीवन मूल्यों में विश्वास रखते हैं उन्हें शोषण मुक्त समाज बनाने के लिए कृतसंकल्प होना चाहिए। हम किसी बड़े परिवर्तन के इंतजार में बैठे नहीं रह सकते हमें स्वयं इस मंजिल तक पहुंचने के लिए प्रयास करने होंगे। उनके ट्रस्टीशिप के विचार का विगत वर्षों से बहुत मंथन हुआ है और इसे व्यवहारिक बनाने के उद्देश्य से डॉक्टर सेठी के सुझाव काफी उपयुक्त है। उनके अनुसार ट्रस्टीशिप के विचार को कार्यान्वित करने के लिए पहले कदम के रूप में पांच बातों पर अमल करना होगा–

1. पूंजीपति अपनी संपत्ति का एक अंश समाज को समर्पित करें।
2. पूंजीपति ट्रस्टीशिप प्रणाली के रूप में सभी इस व्यवस्था में शामिल हो।
3. मजदूरों की इक्विटी पूंजी में साझेदारी सुनिश्चित हो।
4. प्रक्रिया को तेज करने के लिए एक बड़ा सहकारी क्षेत्र विकसित हो।
5. ट्रस्टीशिप की योजना को आकार देने के लिए सत्याग्रह की शक्ति का उपयोग किया जाए।

आज 30 साल बाद विनाश के कगार पर खड़े हुए हम फिर से लघु उद्योगों की सार्थकता को समझने का प्रयास कर रहे हैं। क्या यह दोनों ग्रामीण और शहरी व्यवस्था को अलग करके बनाया जा सकता है कि नहीं अपितु इसके लिए हमें अलग प्रयास करने होंगे। क्योंकि कुटीर और लघु उद्योग राज्य आश्रित ही रहे हैं इसलिए इनके लिए सरकारी सहायता जरूरी रही है इस स्थिति से उबरने के लिए आवश्यक होगा कि उनको आर्थिक रूप से एक व्यवहारिक इकाई बनाया जा सके। हमें बड़ी मशीन के साथ ऐसी छोटी मशीन को भी इजाद करना होगा जो इस तंत्र में अपनी जगह बना सके तथा निर्माण का ढांचा खड़ा कर सके।

गांधीजी की राय में भारत ही नहीं बल्कि सारी दुनिया की अर्थव्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि किसी को भी अन्न और वस्त्र की कमी ना सहनी पड़े। प्रत्येक व्यक्ति को इतना काम अवश्य मिल जाना चाहिए कि वह अपनी खाने पहनने की जरूरतों को पूरा कर सके और यह आदर्श तभी व्यवहार में उतारा जा सकता है, जब जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं के उत्पादन के साधन जनता के नियंत्रण में रहे व प्रत्येक को बिना किसी बाधा के उसी प्रकार प्राप्त होने चाहिए जिस तरह भगवान की दी हुई हवा और पानी हमें प्राप्त हैं। किसी भी हालत में वे दूसरों के शोषण के लिए चलाए जाने वाले व्यापार का वाहन न बने। किसी भी देश, राष्ट्र या समुदाय का उन पर एकाधिकार होना अन्याय पूर्ण माना जाएगा। हम आज न केवल अपने इस देश में बल्कि दुनिया के दूसरे हिस्सों में भी जो गरीबी देखते हैं इसका कारण इस सरल से जीवन उपयोगी सिद्धांत की उपेक्षा ही है।

गांधीजी के समाजवाद में औद्योगिकरण की आवश्यकता नहीं है यह मानव जाति के

लिए अभिशाप बन जाएगा, इसमें एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्र का शोषण होता है। उद्योगवाद का दारोमदार पूरी तरह इस बात पर होता है कि आप में शोषण करने की क्षमता हो, विदेशी बाजार आपके लिए खुले हो और आपके साथ स्पर्धा करने वाले ना हो। आपने हरिजन 1—9—1946 में लिखा कि——''मैं नहीं मानता किसी भी देश के लिए किसी भी अवस्था में बड़े कल कारखानों का विकास करना जरूरी है। भारत के लिए तो और भी कम जरूरी है। मेरा विश्वास है कि स्वाधीन भारत दुख से कराहते हुए संसार के प्रति अपना कर्तव्य अपने सहस्त्रों गृह उद्योगों का विकास करके सादा किंतु उदार जीवन अपना कर और संसार के साथ शांति पूर्वक रहकर ही पूरा कर सकता है। साथ ही मैं मानता हूं कि कुछ मुख्य उद्योग आवश्यक है। मैं आराम से बैठकर बातें करने वालों के समाजवाद या सशस्त्र समाजवाद को नहीं मानता। मैं सब के ह्रदय परिवर्तन की प्रतीक्षा किए बिना अपनी श्रद्धा के अनुसार काम करने में विश्वास रखता हूं, इसलिए मुख्य उद्योगों को गिनाए बिना ही जिन उद्योगों में बहुत से आदमियों को एक साथ काम करना पड़ता है उन पर राज्य का अधिकार स्थापित कर दूंगा। उनका परिश्रम कुशलता का हो या मामूली, उसकी पैदावार पर स्वामित्व राज्य की मार्फत उन्हीं का होगा। परंतु चूंकि ऐसे राज्य की कल्पना मैं अहिंसा के आधार पर ही कर सकता हूं, इसलिए मैं धनवानों की संपत्ति को जबरदस्ती नहीं छीनूँगा, परंतु उस पर राज्य का अधिकार कराने की प्रक्रिया में इनका सहयोग चाहूंगा। अमीर हो या गरीब, समाज में कोई अछूत नहीं है, दोनों एक ही रोग के फोड़े हैं, और अंत में तो सभी मनुष्य हैं।''

इसलिए गांधी जी ने स्पष्ट ही लिखा है मेरे समाजवाद का अर्थ सर्वोदय है। मैं गूंगे बहरे और अंधे को मिटा कर उठना नहीं चाहता और उनके समाजवाद में इन लोगों के लिए कोई जगह नहीं है, भौतिक उन्नति ही जिसका एकमात्र उद्देश्य है जैसे अमेरिका का ध्येय है कि उसके प्रत्येक शहर निवासी के पास एक मोटर हो। मेरा यह लक्ष्य नहीं है। मैं अपने व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के लिए आजादी चाहता हूं। अगर मैं चाहूं तो आसमान में टिमटिमाते तारों तक पहुंचने की सीढ़ी बनाने की आजादी मुझे मिलनी चाहिए।

इस प्रकार स्पष्ट है कि गांधीवाद और समाजवाद में कुछ आधारभूत अंतर है सीतारमैया ने अपने गांधीवाद—समाजवाद लेख में इन दोनों वादों की तुलनात्मक विवेचना करते हुए लिखा है कि——''यदि समाजवाद का उद्देश्य सबको समान सुविधाएं देना है तो गांधीवाद का यह उद्देश्य है कि हर एक आदमी अपने समय और सुविधाओं का उच्च उद्देश्य की पूर्ति के लिए उपयोग करें। यदि समाजवाद पूंजी कर, भारी अतिरिक्त आयकर, शक्ति द्वारा संपत्ति को स्थानच्युत करता है, तो गांधीजी युगों पुरानी परंपरा का आवाहन करते हैं जिससे अमीरों के मुकाबले में निर्धनता को और धन के मुकाबले में ज्ञान को महत्व दिया है। यदि समाजवाद अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए राज्य की सहायता लेता है तो गांधीवाद अपनी सफलता के लिए प्रत्येक नागरिक के अंतःकरण की उन्नति और संस्कृति के विकास पर विश्वास करता है। समाजवाद के बाहर से लदे हुए परिणाम देखने में शानदार मालूम होते हैं किंतु यह वास्तव में अनिश्चित और खतरे से परिपूर्ण होते हैं, गांधीवाद के परिणाम जो दिखाई देते हैं लोगों की सदभावनाओं के आधार पर मजबूत

और गहरी जड़ जमा लेते हैं। समाजवाद को यह दुखद दृश्य देखना पड़ता है कि उसके पुजारी अपने सिद्धांतो और शक्ति को स्थिर रखने के लिए तानाशाह बन जाए, गांधीवाद स्वेच्छा पूर्वक स्वार्थ त्याग करने में विश्वास करता है। अंत में गांधी स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि मैं ऐसे भारत के लिए कोशिश करूंगा, जिसमें गरीब से गरीब आदमी भी यह महसूस करें कि यह उसका देश है, जिसके निर्माण में उसकी आवाज का महत्व है। मैं ऐसे भारत के लिए कोशिश करूंगा। जिसमें ऊंच–नीच का कोई भेद न हो, जातियां मिलजुलकर रहती हो। ऐसे भारत में, अस्पृश्यता व शराब तथा नशीली चीजों के अनिष्टों के लिए कोई स्थान न होगा। उसमें स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार मिलेंगे। सारी दुनिया से हमारा संबंध शांति और भाईचारे का होगा यह मेरे सपनों के भारत का समाजवाद है।

सन्दर्भ ग्रंथ

1. बोस0 एन0 के0 – 1972, *स्टडीज इन गाँधज्मि,* नवजीवन पाब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, पृ0 **137–139** .
2. Mishra] K-P- and SC Gangal] 198] *Gandhi and the the contemporary World,* Chanakya Publication, New Delhi, pp& **14&19, 78, 79**.
3. गांधी, मदन गोपाल 1982, *गांधी और मार्क्स,* मंथन पब्लिकेशन, रोहतक, हरियाणा पृ0– **58–65, 113** .
4. मंत्री, गणेश 1983, *मार्क्स, गांधी और समसामयिक संदर्भ,* नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली पृ0– **29, 42–45**
5. कुमार, जैनेंद्र'– 1996, *अकाल पुरुष गांधी,* पूर्वोदय प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0– **196, 210**
6. राव यू0 आर0 तथा आर0 के0 प्रभु – –2002, *महात्मा गाँधी के विचार,* नेशनल बुक ट्रस्ट, न० दि०, पृ0 **40–53**.
7. मुकर्जी, आर0 एन0– –2002, *सामाजिक विचारधारा,* विवेक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 **493–500**
8. शर्मा, अमित कुमार– –2011, *भारतीय समाजशास्त्र के प्रमुख सम्प्रदाय,* डी0 के० प्रिंटवर्ल्ड न० दि०, पृ0 **108–117**.
9. कुमार, कृष्ण– –2013, *बुनियादी शिक्षा की प्रासंगिकता,* अंतिमजन, अंक –12 स०––13 दिसम्बर, पृ0 **17**.